लोकमत निर्मित तंत्र में लोकराज की तलाश

डॉ0 उपासना *

प्रचलित लोकतंत्र प्रतिनिधियों के बल पर चलता है। जयप्रकाश नारायण नारायण के लोकतंत्र में आधार प्रतिनिधि नहीं, स्वयं नागरिक हैं। जनता अपने–अपने पर अपनी सहकारशक्ति से अपने जीवन का नियमन और संचालन करे तो लोकतंत्र का असली स्वरूप प्रकट होगा। प्रचलित लोकतंत्र प्रतिनिधि तंत्र है और असमें लोकशाही से अधिक नेताशाही और अफसरशाही है। इनके स्थान पर जयप्रकाश नारायण लोकतंत्र में नागरिक की सत्ता स्थापित करना चाहते थे। गांधी–विनोबा से प्राप्त लोकतंत्र के विचार को प्रतिष्ठित करने के लिए जयप्रकाश नारायण ने संघर्ष किया। उसे लोकतंत्र के इतिहास में एक बुनियादी कदम माना जायेगा।

भारत के अंदर लोकतंत्र एवं लोकशक्ति को मजबूत करने तथा शांति–सौहार्द की स्थापना के लिए जयप्रकाश नारायण निरन्तर प्रयत्नशील रहे। जहाँ कहीं भी लोकतंत्र पर कुठाराघात या जनता के मौलिक अधिकारी का दमन हुआ, जयप्रकाश ने उसके खिलाफ आवाज उठाई। उनका सम्पूर्ण जीवन ही आमजन के लिए संघर्ष में व्यतीत हुआ।

26 जनवरी, 1950 को जो संविधान लागू हुआ उससे लोकतंत्र की व्यवस्था कायम हुई। इस व्यवस्था के अन्तर्गत देशभर के सभी बालिग स्त्री–पूरूष को मतदान अधिकार मिला। दलित या आदिवासी कोई भी मताधि कार से वंचित नहीं रहा। संविधान ने सबको बुनियादी स्वतंत्रताएँ दीं और छुआछूत मिटा दी। लिखने, बोलने, संगठन बनाने, अपना–अपना धर्म मानने की आजादी मिली। सरकार जनता के वोट से बनगी, जनता के कल्याण के लिए काम करेगी, और जनता के वोट से ही बदलेगी। इससे ज्यादा तब जनता को कुछ चाहिए भी नहीं था। अपनी आंतरिक कमजोरियों के कारण शताब्दियों से गुलामी झेलने की आदी भारतीय जनता को आदी क्या मिली, मनों मन मांगी मुराद मिल गई। आजादी की खुमार में देश की सत्ता महत्वाकांक्षी राजनेताओं के हवाले कर जनता चिरनिंद्रा में सो गई। प्रश्न उठता है कि भारतीय लोकतंत्र की स्थापना किन उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए की गई और क्या लोकतंत्र के प्रति हमारा आग्रह अन्य यूरोपीय देशों की भांति ही प्रखर एवं लोकमत से आबद्ध था। लोकतम से अभिप्राय जनता के विचार से है और तंत्र आर्थात् शासन जो जनता के विचार से किया जाए लोकतंत्र कहलाता है। इस प्रश्न के जबाब में कुछ लोग यह कह सकते है कि भारत की जनता को स्वाराज के सुख की भूख थी, लोकतंत्र लोकतंत्र की नहीं। स्वतंत्रता कानून से मिली थी, लोकतंत्र संविधान से मिला।

***झेलम अपार्टमेन्ट, जलालपुर सिटी, नियर बी0 आर0 अम्बेडकर डेन्टल कॉलेज, रामजयपाल रोड, पटना**

भारत में लोकतंत्र की स्थापना का उद्देश्य था–आमजन की सहभगित से संचालित किया जाने वाला शासन। भाषा की दृष्टि से इस शब्द का अर्थ' जनता की सरकार' होता है। लोकतंत्र की शासन प्रणाली बुनियादी तौर पर शासकों और शासितों के बीच के पारस्परिक सम्पर्क और विचारों का आदान प्रदान है। यह एक ऐसा समाज है, जिसमें ''सब लोगों को स्वतंत्रता और न्याय'' मिलता है, अथवा एक ऐसी जीवन प्रणाली है जिसमें यह विश्वास किया जाता है कि जहाँ तक उस समाज के मूल्यों की स्थापना में स्वतंत्र रूप से हिस्सा लेने के अवसरों का संबंध हैं, प्रत्येक व्यक्ति की समानता की कल्पना की जाती है। अथवा एक ऐसा समाज जिसमें ''जनता दृढ़ता से यह संकल्प करती है कि सभी नागरिकों को समाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और आराधना की स्वतंत्रता, अवसर की समानता प्राप्त होगी और समस्त जन समुदाय में भातृत्व की भावना उत्पन्न की जायेगी, जिसमें व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता निहित होगी।

भारत में इंगलैड के नमूने पर जिस लोकतंत्र को कायम किया गया था वह वास्तव में दलतंत्र था। इसमें वोट मतदाता का, उम्मीदवार दलों के और सरकार प्रतिनिधियों की थी सच तो यह भी है कि लोकतंत्र का इससे भिन्न कोई स्वरूप भी हो सकता है, इसका विचार न तो देश के नेताओं को आया और न ही जनता को। सच्चे लोकतंत्र की पहचान तो लोकशक्ति में निहित है। लोकतंत्र में 'तंत्र' लोक के हाथ में रहना चाहिए, न कि 'लोक' 'तंत्र' के हाथ में । भारत में जिस लोकतांत्रिक ढाँचे को अंगीकार किया गया उसमें लोक तंत्र के हवाले कर दिया गया और परिणामतः आज भारतीय लोकतंत्र बेतुका काम कर रहा है। जनता अपनी समस्याओं का करने के लिए शक्ति नहीं जुटी पा रही है, और बेबस होकर राज्य की ओर देखती रहती है। राज्य–शक्ति के भ्रष्ट और निरंकुश होने का यही मूल कारण है।

जयप्रकाश नारायण की लोकतांत्रिक चिंतन प्रकिया ' जनता की सरकार' की अपेक्षा' जनता के लिए सरकार' पर अधिक केन्द्रित थी। वे इस तर्क को अस्वीकार करते हैं हर वैसा शासन तंत्र जो जनता के द्वारा स्थापित होता है, 'जनता के लिए' काम करता है। 20वीं सदी के मध्य तक सारी दुनिया में लोकतंत्र की सुरक्षा हेतु संघर्ष के लिए स्वयं को प्रमुखता के साथ प्रस्तुत करने वाली ब्रिटिश सरकार भारत में लोकतंत्र की हत्या जिस निर्ममता से कर रही थी, वह कटु आलोकना का विषय था।

जयप्रकाश नारायाण का लोकतंत्र एक ऐसे समाज की कल्पना है जिसका सर्वोच्च लक्ष्य व्यक्तित्व विकास के लिए सर्वेतम वातावरण पैदा करना है। शताब्दियों से चली आ रही वर्ण–व्यवस्था और जाति–व्यवस्था के विशाल गढ़ को तोड़कर, एक ऐसे समाज का निर्माण करना चाहते थें, जहाँ व्यक्ति और व्यक्ति के बीच विभेद करने वाली कोई धारणा निवास नहीं करती नहीं करती हो। इसके लिए उन्होने लोकतांत्रिक और संवैधानिक मार्ग को अपनाया। उनका मानना था कि सामजिक व्यवस्था द्वारा यह तय किया जाना चाहिए कि प्रत्येक व्यक्ति को ऐसा कार्य करने के लिए जिसे करने में वह समर्थ है, निर्बाध पहलकदमी करने के अवसर दिए जाने चाहिए, बशर्ते यह कार्य सामाजिक दृष्टि से वांछनीय हो। मात्र थोड़े से राजनैतिक अधिकारों से ही लोकतंत्र की पृष्ठभूमि तैयार नहीं होती। समाजिकता तथा नैतिकता लोकतांत्रिक विचारधारा के प्रमुख अंग है।

जात–पात और छुआछुत जैसी सामाजिक प्रणालियाँ एवं मानसिक प्रवृतियाँ लोकतंत्र के मार्ग में बहुत बड़ी बाधाएँ हैं। जिस समाज में लोग जातिगत आधार पर ऊँच–नीच और अछुत समझे जाते हों, उसमें लोकतंत्र सफल नहीं हो सकता। लोकतंत्र के प्रति आस्था रखने वाले लोगों को यह समझना आवश्यक है कि लोकतंत्र के इन प्रबल शत्रुओं को राजनीति के हथियारों से नहीं, वरन् शिक्षा और विवके के शस्त्रों से भूमिसात् किया जा सकता है। जयप्रकाश नारायण आधुनिक लोकतंत्र में राजनीतिक दलों की भूमिका से संतुष्ट नहीं थे। दलगत राजनीति जनता के नैतिक चरित्र को गिराती है राजनीतिक दल और उनकी कार्यपद्धति के आगे जनता असहाय सी बन गई है। जन उपक्रम लोकतंत्र का वास्तविक आधार है, यह दुर्भाग्य है कि जनता को अपने ऐच्दिक कार्ये के लिए सही रूप से प्रोत्साहित नहीं किया जाता। वर्तमान दलगत राजनीति नैतिकता को दबाने वाली षड्यंत्रों को प्रोत्साहित करने वाली है। जनता को राजनीतिक दल विभाजित करने हैं। जयप्रकाश नारायण का कहना थ कि आज का भारत लोकतंत्र नहीं अपितु दलतंत्र (Partycracy) हैं। जहाँ पर धन, संगठन और प्रचार पर आधारित राजनीतिक दल लोगों पर शासन करता है। संसद से लेकर ग्राम–पंचायत तक सही लोकतंत्र के सष्जन के लिए और लोगों में नागरिकता की भावना पैदा करने के लिए हर स्तर पर एक साथ सत्याग्रह चलाया चाहिए। स्वयं राजनीतिक दलों को एक आत्मनिरोधक अध्यादेश पास करना चाहिए, जिसमें कहा गया हो किवे स्थानीय सत्ता के मामलों से स्वयं को दूर रखेंगे एवं वे जन–इच्छाओं तथा जरूरतों के अनुरूप नहीं वरन् उसके प्रत्यक्ष नियंत्रण के अधीन भी होंगे।

जयप्रकाश नारायण भारत के लोकतंत्र में लोकराज स्थापित करने के प्रति कितने सजग थे इसका उदाहरण हमें जयप्रकाश नारायण द्वारा प्रधानमंत्री मोरारजी

देसाई को लिखे पत्र में मिलता है। इसमें सरकार, लोकतंत्र और जनता के बारे में उनके विचारों की झलक साफ–साफ मिलती है। इस ऐतिहासिक पत्र से स्पष्ट है किवे सदैव एक ऐसे शासन की अपेक्षा करते थे जो अपने चुनावी वादों को निभाए, जनता के प्रति अपने उत्तरदायित्वों के प्रति जागरूक रखे, लोगों की अपेक्षाओं को पूरा करे फिर चाहे वह कांग्रेसी सरकार हो या कोई अन्य सरकार।

जयप्रकाश नारायण लोकतंत्र में लोक–सत्ता को प्रधान मानते थे। समाजवाद में गहरी आस्था रखने वाले जयप्रकाश नारायण का कहना था–'सत्त का हस्तांतरण उत्पादक जनसमूह को हो। प्रारंभ में इन्हीं कारणों से उनहोने मार्क्स के विचार को ग्रहण किया और समाज परिवर्तन के लिए उनकी लगन तीव्र होती गई। उनके मन में यह बात बैठ गई थी कि जनसमूह के बीच से गरीबी, दुख–दर्द, विषमता, शोषण आदि समाप्त होना चाहिए। उनके जीवन का यह एक निर्णायक मोड़ था। समाजवाद से प्रभावित होने के बाद भले ही उनका मार्ग बदल गया, परन्तु मकसद वही था– जन–जन की भलाई। लोकनीति यानि जनता की राजीति को प्रोत्साहन देना। वे सदैव यही बात दहरते रहे कि सत्ता की राजनीति ही सबकुछ नहीं है। यह चितन पूरी तरह गलत है कि समाज की सेवा करने के लिए और समाज में यपरिवर्तन लाने के लिए सत्ता हाथ में लेनी चाहिए। लोकतंत्र के लिए तो आवश्यक है कि लोग सरकार का कम से कम सहारा लेनेवाले बनें। लोगों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए किवे अपनी ही इच्छा और प्रयत्न से अपना उत्थान करने की दिशा पकड़े। यदि सामाजिक नव–निर्माण की सारी जिम्मेदारी हम सरकार की ही मान लेंगे, तो बहुत बड़ी ठोकर खायेंगे इसलिए सत्ता में जाने के प्रलोभन पर अंकश रखना चाहिए। लोकनीति में जयप्रकाश की गहरी आस्था थी। जिस प्रकार गांधी जी हमेशा लोकसत्ता को मजबूत बनाए रखने के पक्षधर रहें जाप्रकाश नारायण भी लोकसत्ता को मजबूत बनाने के लिए संघर्षरत रहे, उनका कहना था कि कि मात्र राजसत्ता के जरिए समाज में कोई व्यापक परिवर्तन नहीं लाया जा सकता। इन्हीं कारणों से आजादी प्राप्त होने के बाद उन्होंने कांग्रेस को भंग कर 'लोकसेवक संघ' बनाने की सलाह दी थी।

जयप्रकाश नारायण ने शुरू से अपने को सत्ता की राजनीति से अलग रखा। संविधान सभा का भी उन्होंने विरोध किया और जीवन में कभी कोई चुनाव नहीं लड़ा। अपने निर्णय के पीछे प्रभावी कारणों पर प्रकाश डालते हुए उन्होने कहा था ''दुनिया में बड़ी–बड़ी क्रांतियाँ सफल हुई, इंकलाब हुए। फ्रांस में क्राति हुई, रूस में क्रांति हुई, अमेरिका स्वतंत्र हुआ, चीन में क्रांति हुई। दुनिया की ये क्रांतियाँ सफल हुई, उसके बाद क्या हुआ? हर एक क्रांति में हमें यह देखने को मिलता है कि उस क्रोति का सबसे बड़ा नेता अपने देश के सर्वोच्च सिंहासन पर जा बैठा,

उसने सरकार की बागडोर अपने हाथ में ले ली। क्रांति का उद्देश्य पूरा करने के लिए, परिवर्तन के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए, नये समाज का निर्माण करने के लिए हर एक ने सत्ता ग्रहण की केवल गांधीजी ही एक ऐसे नेता निकले, जिन्होंने अपने हाथ में सत्ता नहीं ली। .....उन्हें पूर्ण विश्वास था कि उनके उद्देश्यों की पूर्ति सत्ता द्वारा नहीं हो सकेगी। यह उनके चिन्तन का सार। भारतीय स्वतंत्रता ओदोलन एक सर्वेत्तम जन– आंदोलन था वह राजनीति यानी राज्य की राजनीति नहीं थी, बल्कि लोकनीति यानी जनता की राजनीति थी।

जयप्रकाश नारायण ने ऐसे लोकतंत्र की कल्पना की जो सामुदायिक समाज में परिपूर्ण एवं प्रत्यक्ष लोकतंत्र का निर्माण करे जिसे 'उन्होने 'सहभागी लोकतंत्र' की अभिनव संज्ञा दी है तथा जिसमें मानवीय समाजवाद के तत्व निहित हों। लोकतंत्र परिपूर्ण तब होगा जब 'तंत्र' का संचालन स्वयं 'लोक करेगा' लोक–प्रतिनिधि नहीं है। आनेवाला युग प्रत्यक्ष लोक–शासन का है। इतिहास में जितनी भी क्रांतियाँ हुई है, उन सबका लक्ष्य यही रहा है कि सत्ता के ढाँचे में बुनियादी परिवर्तन हो, यानी सत्ता की बागडोर प्रत्यक्ष रूप से जनता के हाथ में आ जाय। परन्तु अभी तक कोई क्रांति अपने इस लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर पायी। इसलिए अब जो नयी क्रांति विश्वमानस में उभर रही है, उसकी मांग यह है कि सत्ता का अधिष्ठान जनता से दूर कहीं पेरिस या मास्को में न होकर स्वयं जनता के पास हो। 'Poer at the work-place' यानी कार्यस्थल के पास सत्ता हो यह मांग की जा रही है। सत्ता वहाँ चाहिए, जहाँ जनता काम करती है। किसान खेत में, मजदूर कारखाने मे और विद्यार्थी विश्वविद्यालय में काम करता है। अतः सत्ता का अधिष्ठान खेत और कारखाना होगा, विश्वविद्यालय होगा।

जयप्रकाश नारायण की समाजवादी समाज से सामुदायिक समाज तक की उनकी कल्पनाओं में आदर्श भेद नहीं है। उनकी सामुदायिक समाज की परिकल्पना में समाजवाद है, लोकतंत्र है, सर्वोदय है, सत्य–अंहिसा है, मार्क्स के राज्यहीन–वर्गहीन और गांधी के ग्राम–गण्रतंत्र–आधारित 'महासमुद्रीय' समाज की कल्पना भी है। जयप्रकाश नारायण को इस समाजवाद से समुदायवाद तक की यात्रा में इस युग के वैचारिक विकास का इतिहास छिपा हुआ है। जयप्रकाश नारायण कहा करते थे, लोकतंत्र का पौधा, चाहे जिस प्रकार का हो, अधिनायकवाद के वातावरण में विकास और उन्नति प्राप्त नहीं कर सकता। परन्तु यहॉ एक अच्छी बात है कि हमारे देश में यदि पूर्ण नही तो पय्राप्त लोकतांत्रिक वातावरण कायम है। जिसमें अपने इस लोकतंत्र को नये ढ़ंग से सॅवारने, उसके आधार को चौड़ा गहरा करने तथा इस प्रक्रिया को आगे बढ़ाते हुए समय रहते, उसके अभेध और संतोषकारी बनाने का हमें अवसर प्राप्त है। भारत के लिए यह बड़े संतोष का विषय है कि यहॉ पंचायती राज के रूप में जिसको पहले

लोकतांत्रिक केन्दीयकरण कहा जाता था, सहभागी लोकतंत्र की बुनियाद डालने की दिशा में कदम उठाया जा चुका है। इसलिए अपने लोकतंत्र को एक वास्तविक आधार देने और उसकी प्रक्रिया में सम्पूर्ण जनता को सक्रिय एवं स्थायी रूप से शामिल करने के लिए यह आवश्यक है कि हम पंचायत से भी नीचे जाकर स्वयं जनता तक पहुॅचे, और विधिक सामूहिक निकाय, ग्राम–सभा के रूप में गठित कर दें। जो लोग भारतीय लोकतांत्रिक को जीवंत बनाने और जनता को स्वशासन के लिए तैयार करने में रूचि रखते है, उन्हें एकजुट होकर जनता के अंदर सामाजिक चेतना, व्यवहारिक योग्यता तथा नैतिक गुण विकसित करने का प्रयास करना चाहिए। इस देश के सभी लोकतांत्रिक दलों के लिए यह वस्तुतः एक प्रेरणापूर्ण चुनौती है।

जयप्रकाश नारायण के द्वारा पंचायती राज्य की स्थापना करने का प्रयास अधिक सुदष्ढ़ लोकप्रिय एवं संतोषकारी लोकतंत्र की दिशा में एक ठोस कदम है जो क्रियान्वित होने पर स्वराज्य को जनता तक पहुॅचान में सफल हो सकता है, परन्तु इतना ही पर्याप्त नहीं। लोकतंत्र की इमारत को शक्तिशाली और अभेद् बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उसके ऊपर की मंजिलों का निर्माण भी बुनियादी ढ़ॉचे के अनुरूप ही होना चाहिए। वे कहते है लोकतंत्र चाहे जिस प्रकार का हो, उसकी परिपूर्णता के लिए यह आवश्यक है कि उसकी प्रक्रियाऍ यथासंभव कम–से–कम विभाजनकारी होनी चाहिए अर्थात् अधिक–से–अधिक समन्वयमूलक एवं संयौगिक होनी चाहिए।[9] जयप्रकाश नारायण की अंतर्दृष्टि लोकतंत्र के स्वरूप एवं लक्ष्य के विषय में तथा उसे सफल बनाने हेतु विकेन्द्रीकरण की भूमिका के विषय में निरन्तर गहरी होती गई। 1962 में एक भेट वार्ता में उन्होने कहा था : ''..... लोकतंत्र का लक्ष्य व्यक्ति का विकास ही है। ..... अन्ततः ये सारी बातें मनुष्य के गुणोत्कर्ष पर निर्भर करती है, चाहे आप किसी वाद के मानने वाले हों। इसलिए फिर हमें सोचना पड़ता है किवह कौन सी नीति होगी जिसके द्वारा प्रगति, उन्नति, आत्मानिर्भरता, नये–नये विचार तथा सर्जनात्मक शक्ति से पूर्ण का निर्माण किया जा सके। सवोत्तम उपाय यह है कि मनुष्य को उत्तरोत्तर जिम्मेवार बनाया जाये, उसमें आत्मविश्वास पैदा किया जाये, और उसे निष्क्रियता एवं अयहायता की स्थिति से खीचकर ऊपर उठाय जाए।[10] इसी को आधार मानकर वे लोकतंत्र के निर्माण की बुनियादी प्रक्रिया में पंचायती राज की भूमिका पर विचार करते थे। उन्हें भरोसा था कि पंचायती राज राष्ट्र और जनता के सर्वोत्तम गुणों को प्रकट करने में समर्थ होगा। वे मानते थे, लोकतंत्र केवल यह नहीं कि राज्यों में या शिखर पर संसद हो, बल्कि वह कुछ ऐसी चीज है जो प्रत्येक व्यक्ति की शक्तियों को उभारती हो और उसे प्रशिक्षित कर इस योग्य बनाती हो कि वह देश में अपना समुचित स्थान और आवश्यकता पड़ने पर कोई भी स्थान, ग्रहण कर सके। अर्थात अंततः

इसका उद्देश्य है कि भारत के प्रत्येक व्यक्ति का इस प्रकार प्रशिक्षित किया जाए कि वह भारत का सक्षम प्रधानमंत्री बन सके।[11] जयप्रकाश नारायण वर्षो तक इस प्रयोग में शरीक रहे। जब उन्होंने यह देखा कि नैतिक शक्ति अपनी सीमा तक पहुँच कर भी लोकतंत्र में 'लोक' केन्द्रित नहीं कर पा रही तब उन्होंने संघर्ष का मार्ग अपनाया। विनोबा और जयप्रकाश नारायण का मतभेद साध्य को लेकर नहीं था, साधनों को लेकर था। जयप्रकाश नारयण प्रत्यक्ष जनता की शक्ति प्रकट करना चाहते थे और उस शक्ति से नयी रचना करना चाहते थे। तेज रफ्तार से बदलती दुनिया में राजनैतिक दलों के उम्मीदवारों तथा जनता के वोट से चुने गए प्रतिनिधियों का लोकतंत्र तत्कालीन समय में ठीक ढ़ंग से काम नहीं कर रहा था। किसी वक्त राजा का जो स्थान था, उसे प्रतिनिधियों ने ले लिया था। ऐसी स्थिति में लोकतंत्र को एक कदम आगे ले जाना होगा और ऐसा स्वरूप प्रकट करना पड़ेगा जिसमें सत्ता प्रतिनिधियों के हाथ में समिति न हों, बल्कि प्रत्यक्ष जनता के हाथ में रहे। जनता अपनी किस्मत अपने हाथ में ले। अपनी संगठित शक्ति प्रकट करें, और राज्य–शक्ति की मुहताज न रहे। हमें ऐसा लोकतंत्र चाहिए जो परिवर्तनशील हो, जो क्रांति को गति दे, और ऐसी क्रांति चाहिए जो लोकतंत्र को सुरक्षित रखे। ऐसे लोकतेत्र में जनमत एक हथियार होगा सहमति की शक्ति होगी परिवर्तन के लिए खुला संघर्ष होगा।

अपने जीवन के सत्तरवे वर्ष में जयप्रकाश नारायण देश के भविष्य को लेकर पहले से कहीं ज्यादा परेशान रहने लगे थे। आचार्य विनोबा भावे के भूदान आंदोलन में बीस वर्ष तक अपना समय देने और सहयोग करने के बाबजूद वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि लोकतांत्रिक व्यवस्था को सुधारने उसमें परिवर्तन लाने के लिए जिन तमाम कोशिशों की जरूरत है, उसे अपेक्षित रूप से प्रोत्साहित नहीं किया जा रहा। वे कहते है जब मैं देश के नाजुक स्वास्थ्य की दशा की समीक्षा करता हूँ तो यह कहने में मुझे कोई संकोच नहीं कि यह सब गिरते नैतिक मूल्यों का नतीजा है। सार्वजनिक जीवन का कोई भी क्षेत्र, चाहें चह राजनीति हो या सरकार या शिक्षा कारोबार, व्यापारिक संगठन या सामाजिक संगठन कुछ ऐसा नहीं जो गिरते नैतिक मूल्यों से अछूता हो।

इस मूल्यों की रक्षा के लिए दिसम्बर 1973 के अंत में जयप्रकाश नारायण ने लोकतंत्र के लिए युवा (यूथ फॉर डेमोक्रेसी) शीर्षक से एक अपील निकाली। अपील क्या थी, देश में लोकतंत्र को बचा लेने के लिए युवा–शक्ति का खुला आह्वान था।

लोकतंत्र के संबंध में उनकी चिन्ता दिसम्बर 1973 की अपील में स्पष्ट प्रकट हुई थी। अपील में सबसे पहले जयप्रकाश नारायण ने प्रधानमंत्री श्रीमति

इंदिरा गांधी के उस संदेश का उल्लेख किया जिसे इंदिराजी ने युवकों के एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन को भेजा था। उसमें उन्होंनें लिखा था कि ''दुनिया में एक नयी शक्ति–युवा शक्ति (यूथ पावर) का उद्य हुआ है। दुनिया के अनेक देशों में युवकों में उभार आया है। लेकिन यह उभार ज्यादातर स्थानीय प्रश्नों को लेकर है, और प्रायः शिक्षा के क्षेत्र तक सीमित है। शिक्षा का अपना महत्व है, किन्तु आज की सबसे बुनियादी मांग लोकतंत्र की है, क्योंकि लोकतंत्र ही ऐसी व्यवस्था है जिसमें जनता और युवक दोनों अपनी आवाज बुलन्द कर सकते है। भारत में स्थिति यह है कि स्वतंत्रता के बाद लोकतंत्र का लगातार ह्रास होता जा रहा है। चुनाव दिनोंदिन अर्थहीन होते जा रहे हैं। उनकी पूरी प्रक्रिया भ्रष्ट हो गई है। समाज का जीवन खतरे में पड़ता जा रहा है। क्या इस तरह लोकतंत्र का गला घुटता रहेगा और युवक खड़े देखते रहेंगें? आगे बढ़कर कुछ करने का समय यह है, अभी है। लेकिन हर काम लोकतंत्र की सीमा में होनी चाहिए–शांतिपूर्ण, निर्दलीय। आवश्यकता संगठन के अधिक आंदोलन की है आंदोलन पहले स्थानीय स्तर पर हो, उसके बाद बड़े क्षेत्र में हो, अंत में राष्ट्रीय राजनीति में भी हस्तक्षेप करना चाहिए। ऐसा होगा तो पैसे, झूठ, और पर हिंसा और अंकुश लग सकेगा।

जयप्रकाश नारायण का मानना था कि सब प्रश्नों के ऊपर प्रश्न लोकतंत्र का है, क्योंकि उसी से वह शक्ति बनती है जिससे दूसरे प्रश्नों का हल होता है और जिसके न रहने पर दूसरा कोई प्रश्न हल नहीं हो सकता। वे कहते थे, लोकतंत्र का आधार नैतिकता है लेकिन आज स्थिति यह है कि लोकतंत्र अपना नैतिक आधार खो चुका है। अब एक आशा बची है राजनीति का नैतिक पुनर्निर्माण। उनका कहना था लोकतंत्र का आधार मनुष्य है। व्यक्ति साधन नहीं साध्य है। व्यक्ति की महत्ता तथा उसके अधिकारों और कर्त्तव्यों की प्रतिष्ठा लोकतंत्र की विशेषता है, और वही उसे दूसरे सब तंत्रों से भिन्न बना देती है।

सम्पूर्ण क्रांति का आह्वान जयप्रकाश नारायण ने लोकतंत्र की रक्षा के लिए किया। जब इंदिराजी की सरकार में भ्रष्टाचार, महंगाई, अन्याय, अत्याचार आदि का बोलबाला हो गया तो लोकतंत्र के रक्षार्थ जयप्रकाश नारायण ने यह कदम उठाया। लोकतंत्र की मजबूती के लिए यह जरूरी है कि लोग अपने अधिकारों कत्तव्यों के प्रति सचेत हो जाऍं, संगठित हो जाऍं। लोकतंत्र से नागरिक जितना अलग और उदासीन रहेगा, उतना ही कमजोर और कंठित लोकतंत्र होगा। लोकतांत्रिक मूल्यों की चेतना बगैर लोकतंत्र निर्जीव ढ़ॉचेभर रह जाएगा और इस बुनियादी कमजोरी की परख इंदिराजी द्वारा लागू आपातस्थिति में दिखाई पड़ी। तब लोगों की जो प्रतिक्रिया हुई वह उतनी उत्कृष्ट एवं उतनी अधिक नहीं हुई, जितनी होनी चाहिए थी। देश की जनता ने चुपचाप अपने अधिकारों का जबरर्दस्त

हनन सह लिया क्योंकि जनता में अपने अधिकारों का बोध नहीं था। आज भी देश में बहुत कम लोग ऐसे है, जो नागरिक की स्वतंत्रता, अधिकार और उसके कर्त्तव्य को जानते हैं इसलिए इसका एकमात्र रास्ता यह है कि लोगों के पास जाकर उन्हें इस विषय पर सजग किया जाए कि स्वतंत्रता का अर्थ क्या होता है और जनतांत्रिक मूल्यों के बारे में जागृत करना चाहिए।

उनकी मान्यता थी कि लोकतंत्र संचालन के मार्ग में नायक पूजा अथवा व्यक्ति पूजा सबसे बड़ी बाधा हैं। अंधभक्ति की शिकार जनता किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था को अधिनायकवाद की ओर ले जाती है। अतः लोकतंत्र में लोकतंत्र के निर्माण का प्रयास सामूहिक अथवा सामुदायिक स्तर पर होना चाहिए। किसी व्यक्ति विशेष की अवधारणाओं पर नहीं। लोकतंत्र चाहे किसी भी प्रकार का क्यों न हो इस बात का ध्यान रखना जरूरी है कि उसकी प्रक्रियाओं में मत–विभाजन जितना कम हो उतना अच्छा है। जहॉ तक सम्भव हो सके वह एकतामूलक हो।[15]

जयप्रकाश नारायण ने ऐसे संसदीय लोकतंत्र की दिशा में भारत की प्रगति का पथ–प्रदर्शन किया जिसमें लोक अर्थात् जनता केवल निष्क्रिय अभिकर्त्ता नहीं है, बल्कि वह सक्रिय रूप से अपने अधिकारों की मॉग करनेवाली तथा अंत में आदेश देने वाली जनता हैं। उनके इस आंदोलन का प्रयोजन था कि देश में लोकतंत्र को सुदष्ढ़ और प्रतिष्ठित किया जाए, उसकी पुख्ता बुनियाद रखी जाए। इसके लिए उसका आधार बदलना आवश्यक था। लोकतंत्र की प्रतिष्ठा तो शास्त्र–बल हो ही नहीं सकता। उसका शाश्वत आधार है, लोकसम्मति। इसी आधार को सुप्रितिष्ठित करने की चेष्टा जयप्रकाश नारायण ने की। सही दृष्टि से देखा जाए तो यह उस समय के सत्ताधारियों के साथ उनका सहयोग ही था। देखने में प्रतिकार अवश्य था, लेकिन वास्तविक अर्थो में सहयोग था। इस समय के सत्ताधीशों ने इसे समझने की कोशिश नहीं की। [16]

जयप्रकाश नारायण कहा करते थे लोकतंत्र की असली गारंटी है, लोकतंत्र में जनता का विश्वास लोकतंत्र को चला सकने की लोगों की क्षमता.....[17] और इसे खो देने की अवस्था में, लोग सभी राजनीतिक दलों और लोकतंत्र के वर्तमान रूप तथा आचरण से ऊब चुके है। अतः जनता की समझ और क्षमता सब विकसित हो रहीह है कि किस प्रकार सच्चे और सुदृढ़ लोकतंत्र का आधार तैयार किया जाए, जहॉ तानाशाही की जगह लोकशाही का बोलकाला हो।

आज के लोकतंत्र का दायरा पहले के लोकतंत्र से बहुत अधिक व्यापक हो गया है। मानवीय अधिकार (ह्यूमन राइट्स) लिंग–समानता (जेण्डर इक्वैलिटी) सामाजिक न्याय (सोशल जस्टिस), जन–जन की बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति, बालिग मताधिकार, कानून की व्यवस्था, आदि मूल्य आज के लोकतंत्र के

अभिन्न अंग बन गए है, जिन्हें छोड़ा नहीं जा सकता। इन मूल्यों की सिद्वि के लिए अलग क्रांति की जरूरत नहीं रह गई है। ये मूल्य लोकतंत्र के अंदर आ गए है, और लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं के द्वारा सिद्व किए जा सकते हैं। [19]

जयप्रकाश नारायण की जबर्दस्त प्रतिभा थी कि उन्होनें लोकतंत्र के नए बदलते स्वरूप को पहचाना और लोकतंत्र को प्रचनित प्रतिनिधिक लोकतंत्र की अन्धेरी गली से निकाला। लोकतंत्र के इस पुरोधा की लड़ाई निरंतर जारी रही। लोकतांत्रिक शासन प्रणाली की स्थापना के लिए जीवन पर्यन्त अभ्यासरत रहे। परन्तु इसे पूर्णतः लागू नहीं करवा सके। स्वतंत्र भारत का प्रशासनिक ढ़ॉचा अंग्रजों से उधार लिया गया था और कमोवेश वही आज तक चला आ रहा है। आजादी के छः दशक बाद भी आज स्वतंत्र भारत कें ब्रिटिश राजतंत्रात्मक लोकतंत्र की प्रशासनिक प्रणाली कार्यरत है, जिसमें जयप्रकाश नारायण के लोकराज की तलाश न जाने कहा खत्म होगी।

संदर्भ संकेत :–

1. डारोथी पिकल्स, लोकतंत्र, दिल्ली, 1972 पृष्ठ।
2. मनोज कुमार सिंह, शैलेश कुमार चौधरी, भारतीय राजनीतिक दिवस जयप्रकाश नारायण 2007, पृ0 119
3. पूर्ववत पृ0 118
4. अजित भट्टाचार्य, जे0 पी0 एक जीवनी/बीकानेर 2006, पृ0 78
5. सुधांशु रंजन, जयप्रकाश नारायण, पृ0 74
6. जयप्रकाश नारायण, मेरी विचारायात्रा (भागऋ1) 2004 प0 35
7. जयप्रकाश नारायण, सामुदायिक समाज, रूप और चिन्तन प0 11
8. पूर्ववत, 54
9. पूर्ववत, पृ0 73
10. पूर्ववत पृ0 124
11. पूर्ववत पृ0 124
12. आचार्य राममूर्ति, जे0पी0 की विरासत, 2003 पृ0 12–13
13. अजित भट्टाचार्य जे0पी0 एक जीवनी, 2006 पृ0 155
14. आचार्य राममूर्ति, जे0पी0 की विरासत, 2003 पृ0 32
15. जयप्रकाश नारायण, लोक स्वराज्य, पृ0 40
16. जयप्रकाश अमृत कोष 223, पृष्ठ 178
17. विपन चंद्र, लोकतंत्र आपातकाल और जयप्रकाश नारायण, पृ0 144
18. एवरीमैंस, 12 जनवरी, 1974 जे0पी0
19. आचार्य राममूर्ति, जे0पी0 की विरासत, पृ0 161

****